Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 12, Issue No. 2, January-2017, ISSN 2230-7540

शिवप्रसाद सिंह के साहित्य में चित्रित समाज में पारिवारिक व्यवस्था

Poonam[1]* Dr. Sumitra Chaudhary[2]

[1] Research Scholar, Ph.D. in Hindi, OPJS University, Churu, Rajasthan

[2] Research Director, Assistant Professor, Hindi Department, OPJS University, Churu, Rajasthan

सार – ***शिवप्रसाद सिंह ने सामाजिक व्यवस्था के विविध पक्षों को अपनी रचनाओं का विषय बनाया है। सामाजिक जीवन के विविध पहलुओं परिवार व्यवस्था, जाति प्रथा, नारी स्थिति, जमींदारों की स्थिति, दहेज, विवाह इत्यादि पर अपनी लेखनी चलाई है। डॉ. सिंह के कथा सृजन का मूल क्षेत्र ग्रामीण जीवन है। इन्होंने ग्रामीण जीवन की समस्त विद्रूपताओं को उनके नग्नयथार्थ रूप में उघाड़ने की निर्ममता की है वहीं दूसरी ओर भावी जीवन के प्रति इनके साहित्य में आस्था के संकेत भी मिलते हैं।***

----------X----------

परिवार समाज की इकाई है। सामाजिक व्यवस्था का प्रभाव परिवार पर पड़ता है, जैसा स्वरूप सामाजिक व्यवस्था का होता है, वैसा ही परिवार का होता है। भारत में परिवारों का स्वरूप संयुक्त कुटुम्ब का रहा है। डॉ. शिवप्रसाद सिंह भी संयुक्त परिवार के पक्षधर हैं पर समय के अनुसार इन्हें भी अपनी धारणा बदलनी पड़ी।

डॉ. सिंह परिवार पर समाज के घात-परिघात यानी 'इण्टरेक्शन' का प्रभाव मानते हैं। परिवार सामाजिक घात और प्रतिघात से प्रभावित होता है। दिखावे की प्रवृत्ति भले ही परिवार को दुनिया के सामने 'शो केश' में रच संवार कर रखती रहें इनका मानना है, "घर के बाहर कुछ, घर के भीतर कुछ। कहने को तो घर या परिवार समाज की एक इकाई है, उसी का अविछिन्न हिस्सा, पर यह हिस्सा आज मुख्य अंग का एक समन्वित भाग न होकर धारा के बीच का दीप बन गया है। परिणाम यह है कि मुख्य धारा इसे सींचने-सहलाने का काम कम, तोड़ने-काटने और ढाहने-छांटने का काम ज्यादा कर रही है। परिवार के बाहर ऑफिसों में, कैफे या होटलों में, सड़कों या बाग-बगीचों में आप खुश हैं, प्रसन्न हैं, कहकहे लगा रहे हैं तो आपकी खुशी से परिवार भले ही अछूता रह जाए और प्रायः रहता भी है, किन्तु जब आप बाहर की जगहों में परेशान होते हैं, घिर जाते हैं, लताड़ित-प्रताड़ित होते हैं, मायूस उदास होते हैं तो परिवार अछूता नहीं रह पाता। आपकी मनःस्थिति उसे पूर्णतः अपनी लपेट में ले लेती है। चाय के प्याले टूटने लगते हैं। बच्चों के गाल तमाचों से लाल हो जाते हैं। पत्नी सिकुड़-सिमटकर कोने में दुबकी रहती है।"[1] परिवार समाज की इकाई है किन्तु स्वतन्त्र इकाई नहीं है, क्योंकि वह निरन्तर समाज के दूसरे पक्षों के साथ अपने तयशुदा सम्पर्कों और सम्बन्धों से अनुशासित होता रहता है। चूंकि परिवार अपने सदस्यों के सामाजिक, आर्थिक, नैतिक और सांस्कृतिक स्तरों का परिचायक भी होता है, इसी कारण वह हमेशा दूसरों की, बाहरी लोगों की निन्दा-प्रशंसा पूर्ण दृष्टि के प्रभावों से आहत-व्याहत भी होता रहता है, क्योंकि प्रत्येक सामाजिक संस्था एक समाज की ओर एक युग की परिस्थितियों के अनुसार बनती-बिगड़ती है। संयुक्त परिवार की उत्पत्ति भारतवर्ष में ऐसे युग में हुई थी जब ग्रामीण समुदाय में ही यहां के लोग पलते थे। उस समय सामाजिक परिवर्तन और गतिशीलता का नितान्त अभाव था। सब लोग जमीन से जकड़े थे और इस कारण एक स्थान पर एक परिवार में सम्पूर्ण जीवन व्यतीत करते थे। परन्तु आज परिस्थितियाँ बिल्कुल विपरीत हैं। पाश्चात्य शिक्षा और सभ्यता और साथ ही औद्योगिकरण और नगरीकरण के फलस्वरूप भारतवर्ष की सामाजिक परिस्थितियों में क्रान्तिकारी परिवर्तन हो गया है, ऐसी अवस्था में भारतीय संयुक्त परिवार के लिए अपने परम्परात्मक स्वरूप को बनाए रखना कठिन हो गया और उनका विघटन प्रारम्भ हुआ।

आज के परिवेश में भारतीय परिवार काफी बदल गया है। वह परम्परागत व्यवस्था की परम्परा से हटा है। इसके सामाजिक कारण हैं। डॉ. सिंह का कहना है, "आज का

www.ignited.in

परिवार न तो मनुस्मृति के नियमों पर चलता है और न मिताक्षरा के विधानों पर। आज के परिवार के सामने न तो रामायण आदर्श है और न महाभारत ही। सच तो यह है कि भारतीय परिवार भी, देश के ही समान, एक अजीब कशमकश, घुटन, अलगाव, दिशाहीनता, ईष्र्या, कलह और तू-तू मैं-मैं के दौर से गुजर रहा है। संयुक्त परिवार टूट चुके हैं या टूट रहे हैं। बाबा-दादों, पिता-चाचों वाले परिवार बहुत कम रह गए हैं। परिवार का हर सदस्य एक दूसरों को शंका की दृष्टि से देखता है। सभी के चेहरे खिंचे-खिंचे और कुढ़न से भरे दिखाई पड़ते हैं परिणामतः परिवार टूट रहे हैं। ये जितनी जल्दी टूट जाएं, उतना ही अच्छा। यद्यपि इस देश में आज भी इस बात पर बहस जारी है कि क्या इस कृषि प्रधान देश के लिए संयुक्त परिवार वाली पद्धति ज्यादा अच्छी नहीं है। प्रेमचंद ने इसी भावना से प्रेरित होकर 'बड़े घर की बेटी' लिखी थी। आनन्दी टूटते हुए परिवार को संभाल लेती है और पाठकों से लेखक विह्वल होकर कह उठता है- "बड़े घर की बेटियां ऐसी ही होती हैं।"[2] किन्तु यह कल्पना यथार्थ से काफी दूर है। डॉ. सिंह का मानना है कि परिवार के सम्बन्धों को टूटने से जबरदस्ती रोककर शायद सबसे ज्यादा क्षति होती है इसके लिए डॉ. सिंह बटलर के साहित्य का हवाला देते हैं। बटलर ने निमर्मता के साथ कहा है- "परिवार के सम्बन्धों को टूटने न देकर उन्हें जैसे-जैसे कृत्रिम रूप से खींचते चलने की प्रवृत्ति ने जितनी क्षति पहुंचायी है, उतनी किसी और सामाजिक प्रवृत्ति ने नहीं। प्रभु यीशू ने कहा था कि बिना घर-परिवार छोटे कोई सच्चा इसाई नहीं बन सकता, किन्तु मध्यकालीन चर्च ने उनके कथन को झुठलाकर परिवार की सत्ता पर मोहर लगा दी और माता-पिता के निरंकुश अधिकारों के सामने समर्पण की भावना को धार्मिक कृत्य कहकर काफी प्रोत्साहन दिया।"[3]

शिवप्रसाद सिंह का लगभग साहित्य ग्रामीण जीवन पर आधारित है और भारतीय ग्राम जीवन में संयुक्त परिवार का विशेष महत्त्व आदर है। अतः ज्यादातर पारिवारिक सम्बन्धों का जिक्र कहानियों में हुआ है। शुरु-शुरु में लेखक सम्बन्धों की गरिमा को बनाए रखने का प्रयत्न करता है। संयुक्त और विभक्त दोनों ही स्थितियाँ इनके साहित्य में देखी जा सकती हैं। वैसे तो लेखक संयुक्त परिवार का आग्रही लगता है पर समय के आगे दुराग्राही नहीं बनता। डॉ. सिंह ने शुरू में सम्बन्धों को बनाए रखने का प्रयास किया है और अपनी सबसे पहली कहानी में ही इन सम्बन्धों को बनाए रखने की ओर उन्मुख लगता है। 'दादी मां' की मां इस कहानी में पारिवारिक सम्बन्धों को बनाए रखती है। संयुक्त परिवार आर्थिक समस्या के कारण टूटते हैं। धन की समस्या ही भाई-भाई के बीच दरार पैदा कर देती है। 'दादी मां' कहानी में डॉ. सिंह कहते हैं कि, "दादा की मृत्यु के बाद, कुकुरमुत्ते की तरह बढ़ने वाले, मुंह में राम बगल में छुरी वाले दोस्तों की शुभचिन्ता ने स्थिति और भी डांवा डोल कर दी। दादा के श्राद्ध में दादी मां के मना करने पर भी, पिता जी ने जो अतुल सम्पत्ति व्यव की वह घर की तो थी नहीं।"[4] यह कर्ज जो किसी प्रकार चुकाया नहीं जा सकता था। पारिवारिक सम्बन्धों को खत्म कर सकता था, क्योंकि पैसा दादी मां की इच्छा के विरुद्ध खर्च किया गया था। पर दादी मां इस स्थिति को अपने सुहाग कंगन देकर सुलझाती हुई कहती है, "तेरे दाद में यह कंगन मुझे इसी दिन के लिए पहनाया था। उनका गला भर आया। मैंने इसे पहना नहीं, इसे सहेज कर रखती आयी हूँ। यह उनके वंश की निशानी है। पुराने लोग आगा-पीछा सब सोच लेते थे बेटा।"[5] डॉ. सिंह ने मानवीय सम्बन्धों को बनाए रखने की भरपूर कोशिश की है और काफी हद तक वह इसमें सफल भी हुए हैं। 'कबूतरों का अड्डा' कहानी की मां भी 'दादी मां' कहानी की मां की ही तरह परिवार को टूटने से बचाने की भरपूर कोशिश करती है। मानवीय सम्बन्धों को टूटने से बचाने के लिए त्याग की जरूरत होती है। जैसा दादी मां कहानी में दिया गया है। ऐसा ही त्याग 'कबूतरों का अड्डा' कहानी में बूढ़ी देवला देती है। देवला एक विधवा है और उसका एक ही बेटा है जो समय के परिवर्तन और शहरी जिन्दगी की चकाचैंध में खोकर अपनी माता को भूल जाता है और शहर में रहने लगता है। माता अपने इकलौते सहारे को लाख मनाने की कोशिश करती किन्तु सब व्यर्थ। राजीव पर अपनी मां की बातों का कोई असर नहीं होता। बेटे की राह जोहते मां की मृत्यु हो जाती है तब राजीव की आंखें खुलती हैं और पश्चाताप करता है। अन्त में लेखक दर्शाता है कि "राजीव एक चारपाई पर पड़ा सिसक रहा है, शायद आज उसे कोई अभाव मालूम होता है। सामने कबूतरों का अड्डा गिर गया था। आसमानी कबूतरों को सुखी रखने के लिए, उनके पैरों में वह ताकत देने के लिए, जिससे वे आसमान में तैर सकें, घास फूंस का अड्डा जरूरी था राजीव फूटकर रो पड़ा। शायद उसने आज जान लिया कि आसमानी कीर्ति का भी एक आधार होता है। प्यार की लम्बी-लम्बी छाया को संभालने के लिए एक ढांचा होता है और उसकी मां उसकी तमाम आसमानी खुशियों का एक ढांचा थी, हाड़ मांस का अड्डा, जो फिर नहीं बनाया जा सकता।"[6] डॉ. सिंह ने अपनी कुछ कहानियों में पारिवारिक सम्बन्धों या मानवीय सम्बन्धों को बनाए रखने के लिए परिवार के बड़े व्यक्तियों द्वारा त्याग को दिखाया है। इन सबमें वह मां द्वारा त्याग कुछ ज्यादा असरदार तरीके से दिखाते हैं। हो सकता है कि यह प्रभाव डॉ. सिंह पर दादी मां का रहा हो। ऐसी ही एक अन्य कहानी 'गंगा-तुलसी' में भी मां के त्याग द्वारा मानवीय सम्बनधों को बनाए रखने की कोशिश की गई है। 'गंगा-

www.ignited.in

तुलसी' कहानी का नायक सुनील जो कि एक गरीब विधवा का बेटा है। मां जमींदार के घर नौकरी करके सुनील को पढ़ाती है। किन्तु सुनील के साथी सुनील की मां पर लांछन लगाते हैं जिससे उसकी अपनी मां से मोह भंग हो जाता है। सुनील एक दिन निर्णय करता है कि वह आज या तो अम्मा से इस प्रवाद का समाधान मांगेगा या फिर हमेशा के लिए उसकी काली पतित छाया से दूर चला जाएगा और सुनील जवाब तो नहीं मांग पाता पर दूर अवश्य चला जाता है। मां बेटे के वियोग में मरणशय्या पर होती तब सुनील आता है और मां जवाब देती है कि "गंगा के पेट में दुनिया भर की गंदगी समाई रहती है, पर पानी कभी अपवित्र नहीं होता। तेरे में कोई पाप नहीं।"[7] इतना कहते ही मां की मृत्यु हो जाती है और सुनील भी राजीव की तरह पश्चात् कर अपने घर में लौट आता है। डॉ. सिंह की कहानी 'कर्मनाशा की हार' में भी बिगड़ने सम्बन्धों को बनाए रखा गया है। "भैरो पाण्डे कुलदीप और फुलमतिया के प्रेम से खुश नहीं थे। इसलिए कुलदीप को डांट देते हैं। कुलदीप डांट खाकर घर छोड़कर चला जाता है। बाद में फुलमत एक बच्चे को जन्म देती है जिसे गांव वाले पाप समझ कर कर्मनाशा नदी में आयी बाढ़ में फैंकवाना चाहते थे, किन्तु भैरों पाण्डे साहस कर बच्चे और फुलमत को अपना कर मानवीय सम्बन्धों की गरिमा को बढ़ाता है।"[8]

डॉ. शिवप्रसाद संयुक्त परिवार के आग्रही लगते हैं और अपनी पूरी कोशिश के बावजूद संयुक्त परिवार में मानवीय सम्बन्धों को बनाए रखते हैं। किन्तु बदलते समय के परिपेक्ष्य में परिवार टूट रहे हैं मानवीय सम्बन्ध भी बदल रहे हैं इसलिए लेखक समय के प्रति दुराग्रह भी नहीं रखता। डॉ. सिंह अपनी कुछ कहानियों में तो यह आग्रह निभाता भी है। जैसे 'वशीकरण' और 'बीच की दीवार' 'वशीकरण' कहानी में लेखक पारिवारिक सम्बन्धों को टूटने के बाद भी जोड़ने का साहस दिखाता है। 'वशीकरण' कहानी में भाई और भाभी के सम्बन्धों को टूटनेके बाद जोड़ा गया है। भाभी को भाई के परिवार में कोई पसन्द नहीं करता। मां का विश्वास है कि "भगवान ने उनके किसी पूर्व जन्म में किए पाप का बदला लिया है जो उनके हीरे जैसे लड़के के गले में ऊंट बांध्य दिया वह भाभी को कमच्छा की जादूगरनी कहती।"[9] और तनीजा यह हुआ कि मां ने भाभी को स्पष्ट शब्दों में चेतावनी दी कि वह गांव में उनके पास नहीं रह सकती। यहां सम्बन्ध विच्छेद हो जाता है, किन्तु भाई भाभी को कुछ महीने के लिए शहर में ले जाकर रहने लगता है। भाभी-भाई को वश में कर लेती है और अपने प्यार से सभी का मन जीत लेती है। यहां तक कि गांव में वापिस आकर मां का भी। जिसने उसे घर से बाहर निकाल दिया था। डॉ. सिंह ने पारिवारिक रिश्तों को बचाने में बड़ा साहस पूर्ण कार्य अपनी इस कहानी के माध्यम से किया। 'बीच की दीवार' कहानी में तो डॉ. सिंह ने इससे भी बढ़कर साहस दिखाया। 'बीच की दीवार' कहानी में तो डॉ. सिंह ने इससे भी बढ़कर साहस दिखाया। दो भाइयों के बीच बनी 'बीच की दीवार को गिरा' दिया गया। 'बीच की दीवार' कहानी का नायक बाबू लहरी सिंह बचपन में पढ़ाई में कमजोर होता है इसलिए उसे हररोज बड़े भाई से मार खानी पड़ती है। किन्तु लहरी सिंह पर इसका कोई असर नहीं होता। धीरे-धीरे लहरी सिंह जवान हो जाता है और बड़ा भाई उसको ठीक करने के उपाय से उसकी शादी कर देता है। शादी होते ही लहरी सिंह भाई से अलग हो जाते हैं। अलग होकर लहरी सिंह खेती नहीं कर पाते। अलग होते ही एक बैल मर जाता है। दूसरे बीवी बीमार हो जाती है। पैसों का इंतजाम नहीं हो पाता। जब बड़े भाई को इस बात का पता चलता है तो वह उसका ईलाज अपने पैसे से करवाते हैं। लहरी सिंह को बड़ी शर्मिदगी महसूस होती है और वह दो भाईयों के बीच बनी दीवार को गिरा देते हैं।"[10] डॉ. सिंह की भरपूर कोशिश रही है कि मानवीय सम्बन्धों में कहीं दरार न आए। इसीलिए उन्होंने अपने साहित्य में ऐसे चरित्रों को गढ़ा है जो पारिवारिक सम्बन्धों को बनाए रख सकें। 'अलग-अलग वैतरणी' उपन्यास में गांव के जमींदार जयपाल सिंह की पुत्रवधु कनिया भी सारे जुल्मों को सहन करने के बावजूद भी परिवार को टूटने से बचाती है उसका पति बुझारथ सिंह चोर, लुटेरा, बलात्कारी और धूर्त किस्म का व्यक्ति है। किन्तु परिवार को न टूटने दिये जाने की शर्त पर वह यह सब अत्याचार सहन करती है और विपिन जो कि कनिया का देवर है उसे भी बच्चों की तरह सम्भाल कर रखती है।[11] डॉ. सिंह ने जहां तक बन सका इस मानवीय रिश्तों को बनाए रखा है। लेकिन बदलते समय के साथ इस आदर्श स्थिति का झूठापन देखते-देखते आखिर यथार्थ स्थिति को कबूल कर लेता है। तब 'तकावी' का भाई बीच की दीवार तोड़ने की हिम्मत नहीं करता। 'तकावी' कहानी में शंकर सिंह बड़े भाई से अलग होकर तकावी लेकर खेती करता है पर तकावी की रकम वापिस न कर पाने की स्थिति में 'बीच की दीवार' कहानी की तरह भाई साथ नहीं देता और जमीन गिरवी रखनी पड़ती है।"[12] इसी प्रकार 'धरातल' कहानी का देवर भाभी के ऊपर वशीकरण न करके उसे दूध की मक्खी की तरह बाहर निकाल करता है।"[13] मानवीय सम्बन्धों की गरिमा को डॉरु सिंह ने एक सीमा तक बनाए रखा है किन्तु बदलते समय के साथ ही वह भी यथार्थ के धरातल पर आ जाते हैं। हरिया अपने बाप बिहारी को बेहया-बेशर्म ही नहीं कहता, डंडों से मारता भी है। 'एक यात्रा सतह के नीचे' और 'बड़ी लकीरें' के माँ-बाप बेटे को भार समझते हैं और बात-बात पर अपमानित भी करते हैं। मानवीय रिश्तों में समय के साथ-साथ गिरावट आयी है। 'मंजिल और मौत' का बौडम

कुत्ते से अपनत्व रखता है, पर लोग उसे भी मार डालते हैं। 'जंजीर, फायर ब्रिगेड और इनसान' में तो पैसे के आगे कोई सम्बन्ध रहा ही नहीं। यहां पहुंच कर खुद शिवप्रसाद सिंह लिखते हैं, "हम उलझे सम्बन्धों के उस मोड़ पर पहुंच गए हैं, जहां भटके सूत्रों को खोजने से नहीं, उन्हें झटके से मारकर तोड़ने से ही निस्तार है।"[14] आज के व्यक्ति-स्वातंत्र्य वाले जमाने में संयुक्त परिवार का बने रहना मुश्किल हो गया है और अवैज्ञानिक भी सिद्ध किया जा चुका है पर कहीं-कहीं सहन शक्ति और आपसी प्रेम व्यवहार के बूते पर गाँवों में यह सुलभ भी है। लेखक संयुक्त परिवार का मोह त्याग नहीं पाया। सो 'भेड़िए' के तीनों भाई मिलकर ही रहते हैं। उनके आपसी विचार-व्यवहार आठवें दशक में भी संयुक्त परिवार का नमूना पेश करते हैं।

परिवार ध्वंस की प्रक्रिया के बारे में डॉ. सिंह का कहना है कि, "आज परिवार संकट में है। वह निरन्तर ध्वंस और बर्बादी की ओर तेजी से बढ़ रहा है। परिवार के अभिभावक अपनी सन्ततियों के पालन पोषण और शिक्षण का उत्तरदायित्व स्वयं न उठाकर समूहों को सौंप रहे हैं। इस तरह नौकर, आया और स्कूली अध्यापकों द्वारा भावी पीढ़ी प्रचलित नासें, फैशनों और सामाजिक चाल चलन से विवेक रहित ढंग से प्रभावित होने के लिए छोड़ दी जाती है। इसमें इन समूहों का कोई दोष नहीं, फिर भी इसके कारण समाज और देश में उस तरह के संस्कारी, पारिवारिक और मानवीय सम्बन्धों से पुष्ट व्यक्तियों का अभाव तो रहेगा ही, जो किसी भी राष्ट्र की अमूल्य सम्पत्ति होते हैं।"[15] परिवारों के प्रति हमारी उपेक्षा पूरे राष्ट्र को पतन के कगार पर खड़ी कर रही है, इसे नहीं भूलना चाहिए। ईमानदारी और सत्य ही प्रेम और परिवार की मूल भिति है। जब तक उसका प्रत्येक सदस्य इस चीज को सही ढंग से नहीं समझ लेता, शान्ति सम्भव नहीं। ईमानदारी पूर्वक यदि परिवार के प्रत्येक सदस्य के व्यक्तित्व को आदर देते हुए उसकी स्वतन्त्रता की रक्षा की जाएगी, तो वह व्यक्ति भी अपने को सुरक्षित और सार्थक समझकर परिवार के हितों के लिए स्वयं को समर्पित कर देगा। तभी सच्चे अर्थों में सुखी परिवार का जन्म होगा।

संदर्भ सूची:

1. डॉ. शिवप्रसाद सिंह, आधुनिक परिवेश और नवलेखन, पृ. 35
2. डॉ. शिवप्रसाद सिंह, आधुनिक परिवेश और नवलेखन, पृ. 37
3. वही, पृ. 37
4. डॉ. शिवप्रसाद सिंह, अन्धकूप, पृ. 26
5. वही
6. डॉ. शिवप्रसाद सिंह, अन्धकूप, पृ. 155
7. वही, पृ. 286-287
8. डॉ. शिवप्रसाद सिंह, अन्धकूप, पृ. 72-73
9. वही, पृ. 193-194
10. डॉ. शिवप्रसाद सिंह, एक यात्रा सतह के नीचे, पृ. 156-157
11. वही, अलग-अलग वैतरणी
12. डॉ. शिवप्रसाद सिंह, एक यात्रा सतह के नीचे, पृ. 354
13. वही, अन्धकूप, पृ. 13
14. वही, आधुनिक परिवेश और नवलेखन, पृ. 212
15. डॉ. शिवप्रसाद सिंह, आधुनिक परिवेश और नवलेखन, पृ. 41

Corresponding Author

Poonam*

Research Scholar, Ph.D. in Hindi, OPJS University, Churu, Rajasthan

www.ignited.in